इकाई 19

राज्यः मार्क्स, वेबर, पार्सन्स तथा अन्य विचारकों की दृष्टि में "सत्ता"

इकाई की रूपरेखा

19.1 प्रस्तावना

19.2 राज्य की अवधारणा

19.3 राज्य और मार्क्स

19.4 राज्य और वेबर

19.5 राज्य और दुर्खाइम

19.6 सत्ता की अवधारणा

19.7 मार्क्स और सत्ता

19.8 वेबर और सत्ता

19.9 पार्सन्स और सत्ता

19.10 राज्य एवं सत्ता के अन्य प्रारूप

19.11 सारांश

19.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

19.13 संदर्भ ग्रंथावली

अधिगम उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आपः

- राज्य एवं सत्ता तथा उनके अंतर्संबंध, को व्यक्त कर सकेंगे;
- मार्क्स, वेबर और दुर्खाइम द्वारा राज्य की संकल्पना पर प्रकाश डाल सकेंगे; तथा
- मार्क्स, वेबर और पार्सन्स द्वारा राज्य और समाज के संदर्भ में सत्ता की संकल्पना को उजागर कर सकेंगे।

19.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम कार्ल मार्क्स, मैक्स वेबर एवं अन्य विचारकों द्वारा वर्णित राज्य और सत्ता की अवधारणाओं का अध्ययन करेंगे। विभिन्न विचारकों द्वारा वर्णित राज्य और सत्ता के अवयवों तथा परिभाषाओं को समझेंगे। उन्होंने इन अवधारणाओं की व्याख्या अपने समय की राजनीतिक एवं ऐतिहासिक आवश्यकताओं के अनुसार की है। उन्होंने राज्य और सत्ता की सार्वभौमिक अवधारणा की व्याख्या करने के लिए अलग-अलग तरीकों और सोच का प्रयोग किया है। कार्ल मार्क्स और मार्क्स वेबर दो ऐसे प्रमुख समाज चिंतक हैं जिन्होंने आधुनिक राज्य एवं राज्य और समाज के संदर्भ में सत्ता के लक्षणों और विशेषताओं का विस्तार से वर्णन किया है। राज्य और सत्ता के कई सैद्धांतिक प्रारूपों का भी वर्णन किया है जिनमें से अधिकांश राज्य तथा केंद्रीय सरकार द्वारा सत्ता प्रयोग करने

के ढंग पर मार्क्स और वेबर के सिद्धांतों पर प्रतिक्रियाएं हैं। सत्ता के संबंधों को साधारणतया एक व्यक्ति अथवा कुछ व्यक्तियों के समूह द्वारा दूसरों के क्रियाकलापों को समझाने के लिए अपनाए अनिश्चित कारकों के संदर्भ में वर्णित किया जाता है और सत्ता का सरकार और राज्य सत्ता के संदर्भ में वर्णन किया जाता है। इस इकाई के प्रथम अर्द्धांश में मार्क्स और वेबर तथा अन्य विचारकों के राज्य के एक संस्था के रूप में प्रारूपों का परीक्षण किया गया है और दूसरे अर्द्धांश में राज्य और समाज के संदर्भ में सत्ता की अवधारणा का गहराई से विश्लेषण किया गया है।

19.2 राज्य की अवधारणा

'राज्य' शब्द का प्रयोग प्रायः राष्ट्र, सरकार, समाज अथवा देश के पर्याय के रूप में किया जाता है। राज्य के लिए संप्रभु शक्ति का होना पहली शर्त है, जिसका अभिप्राय है उच्चतम सत्ता अथवा शक्ति। अरस्तू ने राज्य को ऐसे परिवारों और गाँवों के संघ के रूप में परिभाषित किया है जिसका अपने लिए पर्याप्त एवं स्वावलम्बी जीवन है अर्थात सुखद और सम्मानजनक जीवन होता है। मैक आईवर के अनुसार राज्य एक ऐसी संस्था है जो सरकार द्वारा लागू किए गए दमनकारी शक्ति से संपन्न कानूनों के माध्यम से एक चिह्नित क्षेत्र में पूरे समुदाय के लिए सामाजिक व्यवस्था की सार्वभौमिक बाह्य शर्तों की पूर्ति करता है। इसे दूसरे ढंग से कहा जा सकता है कि जब लोगों का एक समूह किसी क्षेत्र विशेष में स्थायी रूप से बस जाता है और किसी भी प्रकार के बाहरी नियंत्रण से मुक्त उसकी अपनी एक सरकार होती है तो वे एक राज्य की रचना करते हैं जिसकी अपने लोगों पर संप्रभु शक्ति होती है (दास एंड चौधरी - १९९०)। राज्य, समाज को आपस में बांधे रखने के लिए शक्तियों का प्रयोग करता है। राज्य — विधायी, न्यायिक, सैनिक और नियोजन कार्यों के माध्यम से शक्तियों का प्रयोग करता है। विधायी कार्यों के माध्यम से यह समाज के नियमों को लागू करता है। न्यायिक कार्य, नागरिकों के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा के लिए शक्ति का प्रयोग करते हैं। सैनिक कार्य, अन्य समाजों से संबंध स्थापित करने के लिए शक्ति का प्रयोग करते हैं तो नियोजन कार्यों का संबंध कमी वाली वस्तुओं और संसाधनों को वितरित करने से है। आइए, अब हम राज्य की अवधारणा का भिन्न-भिन्न वैचारिक प्रारूपों के अन्तर्गत परीक्षण करें।

19.3 राज्य और मार्क्स

यद्यपि मार्क्स के पास "राज्य" के संबंध में कोई पूर्ण विकसित विचारधारा नहीं है तो भी उसने अपने लेखन में इसका वर्णन कई प्रकार से किया है। मार्क्स राज्य के विकास को समाज में श्रम के विभाजन के रूप में देखता है। प्राचीन समाज कम जटिल और सरल थे और उनमें श्रम विभाजन न्यूनतम था। जब समाज का विकास प्राचीन से पूँजीवादी के रूप में हुआ तो यह अधिक से अधिक जटिल होता गया तथा इसे नियंत्रित करने के लिए एक केंद्रीय संगठित एजेंसी का उदय हुआ। जिससे अंततः राज्य का गठन हुआ। उसके राज्य संबंधी विचारों का समाज के वर्गीकरण से निकट का संबंध है। उसके लिए राज्य का आधार बल है और राज्य उच्च वर्ग के हितों की रक्षा के लिए तथा पूंजीवादी समाज में सर्वहारा कहलाने वाले कमजोर वर्गों के दमन एवं शोषण के लिए शक्ति और सत्ता का प्रयोग करते हैं। उसके विचार में "राज्य" प्राकृतिक संस्था नहीं अपितु मानव निर्मित संस्था है। मार्क्सवादी राज्य को वर्ग संघर्ष का परिणाम और वर्ग शासन का साधन मानते हैं। इस प्रकार मार्क्स के लिए राज्य अनिवार्य रूप से एक वर्ग संरचना है — एक वर्ग का संगठन जो दूसरे वर्गों पर अपना प्रभुत्व रखता है। उसका विचार है कि मानवता के इतिहास में आर्थिक विकास की एक निश्चित अवस्था में राज्य का उद्भव हुआ, जब समाज सम्पन्न और विपन्न लोगों के दो वर्गों के बीच बंटा हुआ था।

मार्क्सवादी विचारधारा के अनुसार मानव की सबसे महत्वपूर्ण गतिविधि आर्थिक गतिविधि है। उसके अनुसार किसी समाज द्वारा उत्पादन को व्यवस्थित और संगठित करने की प्रक्रिया को समझना उस समाज की पूरी सामाजिक संरचना को समझने का सूत्र है। उसका विचार है कि जीविकोपार्जन के साधनों का उत्पादन ही वह आधार तैयार करता है जिस पर विभिन्न संस्थाएं, वैधानिक सिद्धांत, कला और लोगों के धार्मिक विचार पनपते हैं। मार्क्स आर्थिक उत्पादन को किसी समाज की संरचना की महत्वपूर्ण विशेषता मानता है तथा जिस प्रकार से समाज अपने उत्पादन को व्यवस्थित करता है, उसे समाज की संरचना मानता है। इसके शेष सामाजिक संगठन — इसकी गैर आर्थिक गतिविधियों जैसे विचार, विश्वास, दर्शन, कानूनी सहायता, राज्य इत्यादि को वह ऊपरी ढाँचा मानता है।

प्रत्येक प्रकार के समाज के ऊपरी ढाँचे को इसका आंतरिक ढांचा—जैसे इसकी आर्थिक गतिविधियाँ प्रभावित करती हैं। मार्क्स के अनुसार राज्य एक गैर-आर्थिक संस्था है इसलिए ऊपरी ढाँचे का एक भाग है। इसलिए राज्य का गठन तथा उसकी गतिविधियां समाज द्वारा आर्थिक उत्पादन को संगठित करने के ढंग पर निर्भर करती हैं। मार्क्स ने समाज में वस्तुओं के उत्पादन के विभिन्न तरीकों को उत्पादन के प्रकार कहा है। मार्क्स ने मानवता के विकास के इतिहास के पांच युगों का उत्पादन के प्रकारों के आधार पर विभेद किया है। कालक्रम के अनुसार ये हैं — आदिम, साम्यवादी, प्राचीन, सामन्तवादी, पूँजीवादी और साम्यवादी। प्रत्येक अपने प्रकार के विशिष्ट राज्य और समाज को दर्शाते हैं। उत्पादन के प्रथम और अंतिम प्रकार के अतिरिक्त अर्थात प्राचीन साम्यवाद और साम्यवाद के अतिरिक्त उत्पादन के प्रत्येक प्रकार में कुछ विशिष्ट विशेषताएं एक सी हैं। उनमें से प्रत्येक, वर्ग के आधार पर वस्तुओं का उत्पादन करता है। प्रत्येक ऐतिहासिक युग मे दो वर्ग हैं — एक तो अल्पसंख्यक प्रभुतासंपन्न वर्ग जिसके पास उत्पादन के साधन हैं और दूसरा बहुसंख्यक अधीन वर्ग जिसके पास उत्पादन के साधन नहीं हैं अथवा शोषित वर्ग जो उत्पादक कार्य करता है।

जिनके हाथों में उत्पादन के साधन हैं वे राज्य का नियंत्रण करते हैं। जब भी समाज में उत्पादन के तरीकों में परिवर्तन होता है तो साथ-साथ सरकार में भी परिवर्तन होते हैं। समाज का चाहे जो भी रूप हो, भले ही प्राचीन, सामंतवादी अथवा पूँजीवादी, मार्क्स के अनुसार राज्य हर हाल में प्रभुतासंपन्न वर्ग के हाथों में शोषण का एक साधन है। एक संस्था के रूप में राज्य के संबध में मार्क्स के विचार मुख्यतः समाज के पूंजीवादी रूप पर आधारित हैं। उसके लिए राज्य एक केंद्रीकृत संगठनात्मक एजेंसी है जो आवश्यक रूप से एक वर्ग की दूसरे वर्ग पर प्रभुता में भागीदार होती है। पूंजीवादी समाज के संदर्भ में मार्क्स जिन दो प्रमुख वर्गों के विषय में चर्चा करता है वे हैं — बुर्जआ वर्ग और सर्वहारा। मार्क्स के अनुसार पूंजीवाद अपने आप में एक स्वतः विकसित होने वाली व्यवस्था है और इस व्यवस्था में शिखर पर रहने वाला वर्ग को (बुर्जुआ) किसी प्रयास अथवा सचेत गतिविधियों के कारण राजनीतिक शक्ति प्राप्त नहीं होती अपितु समाज के विकास का ढंग इस प्रकार का है कि उन्हें राजनीतिक शक्ति प्राप्त हो जाती है। मार्क्स का यह विश्वास था कि राज्य मजदूर वर्ग के विरुद्ध एक षड़यंत्र है अथवा बुर्जुआ वर्ग की दौलत को यह सुनिश्चित करने के लिए प्रयोग किया जा सकता था कि जो भी सत्ता में रहे वह उस वर्ग के हितों का ध्यान रखे (मिलर - 1991)। मार्क्स के अनुसार व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए राज्य के सरोकार को संपत्ति धारकों (बुर्जुआ) के अधिकार को सम्पत्तिविहीन (कामगारों) के विरुद्ध प्रयोग करने के प्रयास के रूप में देखा जा सकता है जबकि कामगारों में केवल इतनी शक्ति थी कि वे संयुक्त कार्यवाही के लिए साथ रहे। व्यापार संघ के अधिकारों के लिए संघर्ष सर्वहारा की संयुक्त कार्यवाही का उदाहरण है।

बाक्स 19.1: द्वंद्वात्मक भौतिकवाद

मार्क्स के अनुसार पूरे इतिहास का वाद और प्रतिवाद की दो विरोधी शक्तियों के बीच संघर्ष के रूप में वर्णन किया जा सकता है। इतिहास की प्रत्येक अवस्था जो पूर्णता को

प्राप्त नहीं कर सकी, उसमें अपने ही नाश के बीज होते हैं। वर्गविहीन समाज के पथ की प्रत्येक अवस्था वाद और प्रतिवाद के बीच संघर्ष है और इन दोनों के संघर्ष से नया वाद उत्पन्न होगा और यह सब वर्गविहीन समाज के प्राप्त होने तक चलता रहेगा। विरोधी पक्षों के बीच संघर्ष से उत्पन्न परिवर्तन की अपरिहार्यता तथा विचारों से अधिक वास्तविकताओं द्वारा निर्धारित दर्शन को द्वंद्वात्मक भौतिकवाद कहते हैं। यह साम्यवाद का मूल दर्शन है। द्वंद्वात्मक भौतिकवाद में विकास का अभिप्राय पदार्थ के भीतर से विकास है जिसके विकास में वातावरण भले ही सहायक हो अथवा बाधक परंतु न तो यह विकास क्रिया को प्रारंभ करने और न ही इसे अपने अंतिम लक्ष्य तक पहुंचने से रोकने में समर्थ होता है।

मार्क्स के अनुसार पूंजीवाद को हटाना अनिवार्य था क्योंकि समाज की संस्थाओं का विकास प्राकृतिक और इतिहास की अपरिहार्य प्रक्रिया है। पूंजीवाद स्वयं में सामंतवादी समाज में अमीर और दास लोगों के बीच संघर्ष का परिणाम है। किसी अन्य प्रकार की सामाजिक व्यवस्था के स्थान पर पूंजीवाद का उदय मशीनों तथा कारखानों के आने के कारण हुआ। इस संश्लेषण से दो नई संघर्षशील शक्तियों का उदय हुआ। एक तो पूँजीवादी अथवा बुर्जुआ वर्ग जिसके पास उत्पादन के साधनों का नियंत्रण था और दूसरे दिहाड़ी मजदूर अथवा सर्वहारा वर्ग जिसे अपने अस्तित्व के लिए अपने श्रम को बेचना पड़ता था।

मार्क्स के लेखों में मुख्य रूप से राज्य के तीन रूपों का अध्ययन कर सकते हैं — उदारवादी, मध्यस्थ और क्रियावादी।

उसके प्रारंभिक लेखन में स्पष्ट है कि बुर्जआ वर्ग अपने हितों की रक्षा के लिए शासन करता हैं अथवा राज्य मशीनरी का प्रयोग करता है। मार्क्स के शब्दों में यूं कहा जा सकता है 'राज्य केवल सारे बुर्जुआ वर्ग के कार्यों का प्रबंध करने के लिए एक कमेटी मात्र है (मार्क्स एंड एजेंलस 1968)। इस प्रारूप के अनुसार, आर्थिक शक्ति को बड़ी सरलता से राजनीतिक शक्ति में बदला जा सकता है जिसके माध्यम से प्रमुख बुर्जुआ उदारवादी राज्य के माध्यम से आधीन वर्गों पर शासन करते हैं।

अपने बाद के लेखों में मार्क्स ने अपने इन प्रारंभिक विचारों में कई सुधार किए हैं। बाद के लेखों में, जो अधिकांशतः अनुभव पर आधारित थे, उसने बुर्जुआ के विभिन्न वर्गों के विषय में चर्चा और विचार किया है जो राज्य के माध्यम से अथवा राज्य के लिए राजनीतिक संघर्ष में लगे हुए थे। यहाँ मार्क्स ने राज्य का एक अलग प्रारूप दिया जिसे अर्बिटर प्रारूप कहा गया।

'एटींथ ब्रुमेर ऑफ लुइस बोनापार्ट' पुस्तक में मार्क्स आधुनिक राज्य को इस प्रकार चित्रित करते हैं जिससे बुर्जुआओं के हितों से परे राज्य की स्वायतता स्पष्ट होती है। अपवाद के उन क्षणों को छोड़कर, जब बुर्जुआ वर्ग अन्य वर्गों, जिनके विरुद्ध उन्हें संघर्ष करना चाहिए, पर अपनी पूर्ण प्रभुता स्थापित नहीं कर सकते, आधुनिक राज्य इतना सशक्त हो गया है कि वह प्रतिद्वंद्वी हितों के लिए संघर्ष क्षेत्र, एक प्रत्यक्ष मध्यस्थ और यहाँ तक कि बुर्जुआ वर्ग की शक्ति को सीमित करने के लिए स्वतंत्र कार्यवाही भी कर सकता है (नाश - 2000)। उदाहरण के लिए, 1840 के दशक में इंग्लैण्ड में फैक्टरी कानूनों तथा कोर्न कानूनों पर बहस को औद्योगिक बुर्जुआ वर्ग और कृषि बुर्जुआ वर्ग के बीच संघर्ष के रूप में देखा जा सकता है। वह राज्य पर ऐसे लोगों के नियंत्रण की चर्चा भी करता है जो प्रभुता प्राप्त वर्ग से संबंध नहीं रखता परंतु फिर भी प्रभुतासंपन्न वर्ग के हित में शक्ति का प्रयोग करता है। उदाहरण के लिए, उन्नीसवीं शताब्दी में इग्लैण्ड में केंद्रीय सरकार में जमींदार वर्ग का वर्चस्व था परंतु उन्होंने औद्योगिक बुर्जुआ के हित में अपनी शक्ति का प्रयोग किया। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि पूंजीवादी समाज में चाहे जो भी सत्ता

में आए, वह प्रभुतासंपन्न वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व करता है। इसका कारण यह है कि समाजों के विकास के लिए प्रभुतासंपन्न वर्ग के हितों की रक्षा करना जरूरी होता है।

अपने बाद के लेखों में मार्क्स ने राज्य का एक तीसरा प्रारूप 'क्रियाशील प्रारूप' सुझाया। कैपीटल पुस्तक के खंड 3 में वह राज्य को अलौकिक दर्शाता है जिसका निर्धारण पूरी तरह से समाज में आर्थिक आधार में बदलावों से होता है। वह स्पष्ट करता है कि पूंजीवाद के अस्तित्व के लिए प्रासंगिक औद्योगिक विकास के स्तर पर कार्य करने के लिए एक स्तर पर शिक्षित एवं स्वस्थ कार्यबल आवश्यक है और इसके लिए आने वाली पीढ़ी को किसी भी आवश्यक स्तर के लिए तैयारी सुनिश्चित करना भी आवश्यक है। राज्य इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विकसित होता है। मार्क्स के विचार में वर्गों में बंटे समाज के लिए उपरि ढाँचा अनिवार्य और अपरिहार्य है। यह समाज के सांस्कृतिक लक्षणों और इन लक्षणों को बढ़ावा देने वाली संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करता है। इसका आंतरिक ढाँचा और इसका वर्ग के आधार पर उत्पादन का ढंग तब तक अस्तित्व में रहता है जब तक समाज का वर्ग चरित्र पहचान में नहीं आता अथवा जब तक इसके अधीन लोग इसे वैध मानते हैं। ऊपरि ढांचा (राज्य, एक प्रमुख संस्था के रूप में) इस घटनाक्रम को सुनिश्चित करता है। इसका अर्थ है कि राज्य अनिवार्य रूप से व्यवस्था को एकीकृत एवं संगठित करने का काम करता है। मार्क्स की दृष्टि में राज्य, शासन करने वाले वर्ग के हित में काम करता है क्योंकि यह शासन करने वाले वर्ग के अनुकूल आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के पुनर्जन्म के लिए काम कर रहा है। मार्क्स के विचार में किसी भी राज्य में प्रमुख वर्ग, अन्य वर्गों के हितों की अपेक्षा अपने हितों की रक्षा एवं वृद्धि के लिए काम करता है और कानून बनाता है। अतः राज्य का उद्देश्य निजी संपत्ति की रक्षा करना और संपन्न वर्ग के हित में विपन्न वर्ग का शोषण करना है। राज्य का कोई भी रूप हो, भले ही लोकतंत्र, गणतंत्र अथवा राजतंत्र हो — इसका प्रयोग एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग के शोषण के लिए किया जाता है। राजनीतिक स्तर पर केवल वर्ग हितों का ही प्रतिनिधित्व होता है और अंततः आर्थिक शक्ति ही यह निर्धारित करती है कि राज्य शक्ति का प्रयोग किस प्रकार हो।

अभ्यास 19.1

कार्ल मार्क्स द्वारा वर्णित राज्य के विभिन्न प्रारूपों को स्पष्ट कीजिए।

मार्क्स के अनुसार पूंजीवाद में व्यवस्था के एकीकरण को वर्ग संघर्ष से निरंतर खतरा बना रहता है और राज्य तथा शासकीय विचारधारा का इसको समर्थन एवं सहयोग प्राप्त होता है। वह भविष्यवाणी करता है कि पूंजीवादी समाज में वर्ग संघर्ष से सर्वहारा की तानाशाही आती है और सर्वहारा की तानाशाही के माध्यम से क्रांतिकारी परिवर्तन से सभी वर्ग समाप्त होकर वर्गविहीन समाज अर्थात साम्यवादी समाज की स्थापना होगी। जब वर्गविहीन समाज स्थापित हो जाएगा और राज्य के पास शोषण का कोई कार्य नहीं होगा तो राज्य केवल आर्थिक कार्य ही करेगा। वर्ग भेदों के मिटने से राज्य के राजनीतिक दायित्वों के निर्वाह तथा समाजवादी जीवन के नियमों के पालन की आदत हो जाएगी। इस अवस्था में राज्य की कोई आवश्यकता नहीं होगी और मार्क्स के अनुसार राज्य नष्ट हो जाएगा।

बॉक्स 19.2: मार्क्सवाद

एक सैद्धांतिक व्यवस्था के रूप में मार्क्सवाद ने कार्ल मार्क्स के लेखों से प्रेरणा प्राप्त की और विकसित हुआ। यद्यपि एक नियमबद्ध सिद्धांत के रूप में मार्क्सवाद, मार्क्स की मृत्यु के उपरांत ही अस्तित्व में आया। वस्तुतः यह मार्क्स के विचारों और सिद्धांतों को निरंतर बढ़ रहे समाजवादी आंदोलन की आवश्यकता के अनुरूप विश्व दृष्टि देने के लिए बाद के मार्क्सवादियों के प्रयासों का ही परिणाम था। यद्यपि कई प्रकार की

मार्क्सवादी परम्पराओं को देखा जा सकता है जिनमें शास्त्रीय मार्क्सवाद (मार्क्स का मार्क्सवाद), रूढ़िवादी मार्क्सवाद अथवा द्वंद्वात्मक भौतिकवाद मार्क्सवाद का मशीनी रूप जिसने सोवियत मार्क्सवाद के आधार के रूप में कार्य किया, और पाश्चात्य, आधुनिक अथवा नव मार्क्सवाद जो मार्क्सवाद को मानवीय दर्शन के रूप में देखता है और इसके वैज्ञानिक तथा निर्धारक तत्वों के प्रति अस्पष्ट है। मार्क्सवाद के दर्शन का आधार एंजेल्स के अनुसार "इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या" थी । यह आर्थिक जीवन तथा उन स्थितियों को उजागर करता है जिनके अंतर्गत लोग अपने अस्तित्व के लिए जीवन के साधनों का उत्पादन तथा पुनः उत्पादन करते हैं जो इस विश्वास में परिलक्षित होता है आर्थिक आधार'(जिसमें अनिवार्य रूप से उत्पादन का ढंग सम्मिलित है) अथवा आर्थिक व्यवस्था और स्थितियां ही वैचारिक और राजनीतिक उपरिढाँचे का निर्धारण करती हैं। इस प्रकार मार्क्सवादी विचारधारा सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विकास की व्याख्या भौतिक और वर्ग भेद के आधार पर करती है। मार्क्स द्वारा इतिहास की उद्देश्यपरक मीमांसा ही मार्क्सवादी परम्परा का आधार है जिसके मतानुसार इतिहास द्वंद्व की प्रक्रिया से ही आगे बढ़ता है और इसमें उत्पादन के प्रत्येक ढंग में अंतर्निहित विरोधाभास वर्ग शत्रुता के रूप में दिखाई देता है। अतः वर्ग समाजों में पूंजीवाद ही प्रौद्योगिकी में सबसे अधिक उन्नत है और जिसके भाग्य में सर्वहारा क्रांति से नष्ट होना लिखा है, जिसके बाद वर्गहीन साम्यवादी समाज की स्थापना होगी। मार्क्सवाद का बौद्धिक आकर्षण यह है कि इसकी दृष्टि बड़ी विस्तृत है जो समाज और राजनीतिक अस्तित्व के लगभग पहलुओं को समझने और व्याख्या करने के साथ-साथ परम्परागत सिद्धांतों में छोड़ दी जाने वाली प्रक्रियाओं के महत्व को उजागर करने का अवसर प्रदान करता है। राजनीतिक दृष्टि से यह शोषण और दमन पर प्रहार करता है और विशेष रूप से क्षतिग्रस्त समूहों और लोगों का दृढ़ता से पक्ष लेता है। सोवियत रूस और यूरोप के कुछ पूर्वी देशों में साम्यवाद के समाप्त हो जाने से कुछ शिक्षाविदों ने मार्क्सवाद और साम्यवाद की प्रासंगिकता समाप्त होने की बहस शुरू कर दी है। यद्यपि वस्तुस्थिति यह है कि इन देशों में प्रचलित साम्यवाद के रूप लोगों की अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर सके और व्यवस्था अनेक कारणों से असफल हो गई। इसका मार्क्सवाद के सिद्धांत से कुछ लेना-देना नहीं है। मार्क्सवाद आज भी वर्ग, शक्ति, राज्य और समाज के संबंध में एक सर्वोत्तम सिद्धांत है।

19.4 राज्य और वेबर

मैक्स वेबर ने "पॉलिटिक्स एज़ ए वोकेशन" में लिखा है कि राज्य एक मानव समुदाय है अथवा एक विशेष प्रकार की संस्था है जो एक दिए हुए क्षेत्र में शारीरिक बल प्रयोग करने के एकाधिकार का दावा करती है (वेबर 1948)। इससे उसका अभिप्राय राज्य द्वारा अपने नागरिकों से अपनी आज्ञा मनवाने मात्र को सुनिश्चित करना ही नहीं था अपितु राज्य के इस अधिकार को स्वीकृति देना था। इस प्रकार वैध हिंसा पर एकाधिकार राज्य की संप्रभुता को व्यवहार में प्रकट करता है। वह आधुनिक समाज में राज्य को एक अत्यधिक शक्तिशाली संस्था के रूप में देखता है क्योंकि इसे एक निश्चित क्षेत्र पर वैध ढंग से बल प्रयोग करने का एकाधिकार प्राप्त है (वेबर 1948)।

वह आधुनिक राज्य की चार विशेषताओं का विस्तार से वर्णन करता है। पहला तो यह कि राज्य की कानूनी और प्रशासनिक व्यवस्था होती है जिसे केवल विधायी तरीकों से न कि किसी लार्ड अथवा करिश्माई नेता के इशारे पर बदला जा सकता है। दूसरे इसका अपना प्रशासन होता है जो कानून के अनुसार चलता है। इसका अर्थ है कि प्रशासनिक अधिकारी और न्यायपालिका अपने कानून को लागू करते हैं। तीसरे राज्य का अपने सभी सदस्यों तथा अपने क्षेत्र में होने वाले कार्यों पर बाध्यकारी अधिकार होता है और प्रायः जन्म से ही

सदस्यता प्रदान की जाती है। अंत में राज्य बल प्रयोग कर सकता है यदि यह कानूनी तौर पर मान्य एवं स्वीकृत हो।

वेबर के लिए राजनीतिक समाज वह समाज है जिसकी व्यवस्था और अस्तित्व की एक निश्चित क्षेत्र में, रक्षा, प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा बल प्रयोग अथवा बल प्रयोग की धमकी से की जाती है। एक राजनीतिक संगठन तब राज्य बन जाता है जब वह अपने निश्चित क्षेत्र में सफलतापूर्वक बल प्रयोग करने का वैध एकाधिकार प्राप्त कर लेता है। वेबर के अनुसार, कानूनी, धार्मिक और राजनीतिक संस्थाओं तथा उनके अंतर्संबंधों का आर्थिक संरचना और आर्थिक संस्थाओं पर निर्णायक महत्व होता है न कि इससे उलट — जैसा कि मार्क्स ने बताया था। वेबर मार्क्स के आर्थिक निर्धारण का विरोध करता है। वह प्रशासन के साधनों के संकेंद्रण को राष्ट्र-राज्य का महत्वपूर्ण तत्व मानता है।

यह देखा जा सकता है कि राज्य और सत्ता के संबंध में वेबर के सिद्धांत परस्पर सम्बद्ध हैं। क्रमशः इनका उसके प्रभुता के सिद्धांत से निकट का संबंध है। वेबर तीन प्रकार की प्रभुता की चर्चा करता हैः चमत्कारिक, परम्परागत और कानूनी-विवेक सम्मत। उसके अनुसार ये तीनों तरह की प्रभुता किसी भी स्थिति में साथ-साथ रहती हैं परंतु यह सम्भव है कि कोई एक प्रखर हो। वेबर का कहना है कि आधुनिक राज्य में कानूनी-विवेक सम्मत प्रभुता अधिक प्रखर है।

वेबर के अनुसार आधुनिक राज्य वैध है यदि लोग इसकी वैधता में विश्वास करें। तीन प्रकार की प्रभुता में से कोई एक आधुनिक राज्य में हो सकती है। हम तीनों में से किसी एक को विवेक के आधार पर नहीं चुन सकते, अपितु प्रत्येक को अपने आधार पर न्यायोचित ठहराया जा सकता है। प्रत्येक व्यवस्था अपने आपको न्यायोचित सिद्ध करती है, परम्परागत प्रभुता को परम्परा न्यायोचित ठहराती है, चमत्कारिक प्रभुता को चमत्कार और कानूनी विवेक सम्मत प्रभुता में कानून तभी वैध होते हैं जब उन्हें कानून द्वारा लागू किया गया हो। ऐसे कोई सर्वश्रेष्ठ मूल्य नहीं है जिनके द्वारा हम बेहतर अथवा बदतर व्यवस्था चुनते हैं।

वेबर का विश्वास कि आधुनिक राज्य में किसी भी नियम को इस आशा के साथ कानून के रूप में लागू किया जा सकता है कि इसका पालन किया जाएगा। सरकार और सरकारी तंत्र इन कानूनों से निर्मित निरपेक्ष व्यवस्था से बंधे हुए हैं और इन कानूनों का प्रयोग ही न्याय है। शासन की ऐसी व्यवस्था में सत्ता, लोगों के पास होती है। ऐसा उनके अस्थायी अधिकारी होने के कारण होता है न कि व्यक्तिगत सत्ता के कारण। और लोग कानूनों की पालना करते हैं न कि वे अधिकारी जिन्होंने इन्हें लागू करवाया। राष्ट्रीय कानूनी सत्ता प्राप्त राज्य विधिवत निर्वाचित प्रतिनिधियों की सहमति के बिना लोगों के व्यक्तिगत कानूनों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

अभ्यास 19.2

वेबर के अनुसार राज्य की क्या विशेषताएं हैं? राज्य के संबंध में मार्क्स और वेबर के विचारों की तुलना करके अंतर स्पष्ट कीजिए।

वेबर के अनुसार नौकरशाही आधुनिक राज्य का संगठनात्मक उपकरण है और आधुनिक पूंजीवादी राज्य अपने निरंतर अस्तित्व के लिए पूरी तरह से नौकरशाही पर निर्भर हैं। वेबर राज्य को आधुनिकता में प्रशासन के सारे साधनों को सम्राट के हाथों में सौंप कर शक्ति प्राप्त करने वाला बताता है। उदाहरण के लिए, नौकरशाही व्यवस्था का विकास प्राचीन मिस्र में हुआ जब सम्राट को हथियारों और सैनिक सामान की आपूर्ति के लिए स्थायी सेना की आवश्यकता थी। वेबर के अनुसार ये घटनाएं आधुनिक राज्य के अभ्युदय की महत्वपूर्ण कारक थीं जिसमें श्रम विभाजन पर आधारित अफसरशाही को प्रशासन के साधनों पर

स्वामित्व से बिल्कुल अलग करती हैं। आधुनिक विवेकशील नौकरशाही में अफसरों का अपने कार्यों पर न्यूनतम अथवा कोई नियंत्रण नहीं होता क्योंकि नौकरशाही के नियम और तौर-तरीकों का अपना अस्तित्व होता है जो इसमें काम करने वाले अधिकारियों की गतिविधियों को उनके पदों के कर्त्तव्यों तक सीमित कर देते हैं। आधुनिक राज्य में नौकरशाही स्टील की तरह मजबूत है (नौकरशाही के आदर्श रूप के लिए बाक्स 2 देखिए)।

अफसरों की फौज रखने वाले विवेकशील राज्य, का यह विकास पूरी तरह आर्थिक तर्कसंगतता से निर्मित नहीं है परंतु कुछ हद तक पूंजीवाद के विकास से पहले की घटना है जिसने अपने अभ्युदय के लिए स्थितियाँ पैदा कीं। कानूनी सत्ता अथवा अफसरशाही व्यवस्था का मुखिया राज्य का मुखिया होता है और वह अपने पद पर अधिकार, चुनाव अथवा उत्तराधिकारी के रूप में बने रह सकता है। परंतु फिर भी उसकी शक्तियाँ कानूनी रूप से सीमित होती हैं।

बॉक्स 19.3: आदर्शात्मक प्रकार की नौकरशाही (आदर्शात्मक नौकरशाही)

वेबर के अनुसार आदर्श प्रकार की नौकरशाही की विशेषताएं इस प्रकार हैं —

1) नियमानुसार सरकारी गतिविधियों का निरंतर संचालन।

2) निपुणता का एक विशिष्ट क्षेत्र जिसमें सम्मिलित हैं :

   क) व्यवस्थित श्रम विभाजन के अंग के रूप में नकारे गये — कार्यों को करने के दायित्व का क्षेत्र।

   ख) इन कार्यों को करने के लिए आवश्यक अधिकार प्राप्त पदाधिकारियों का प्रावधान।

   ग) अनिवार्यता के आवश्यक साधन सुपरिभाषित हैं और उनका प्रयोग विशिष्ट परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

3) कार्यालयों का संगठन पदानुक्रम के सिद्धांत पर चलता है अर्थात प्रत्येक छोटा पद किसी बड़े के नियंत्रण एवं निरीक्षण के आधीन होता है। निम्न को उच्चाधिकारी से अपील तथा शिकायत करने का अधिकार होता है। पदानुक्रम में इस विषय पर भेद है कि क्या और किन मामलों में शिकायतों पर उच्चाधिकारियों द्वारा निर्णय लिए जा सकते हैं और क्या फैसले उच्चाधिकारियों द्वारा निचले अधिकारियों पर थोपे जाते हैं अथवा इस प्रकार के परिवर्तन का दायित्व उन निचले अधिकारियों पर छोड़ दिया जाता है जिनका व्यवहार ही शिकायत का विषय था।

4) किसी कार्यालय के व्यवहार को नियमित करने वाले नियम तकनीकी नियम हो सकते हैं। ऐसे मामले में यदि उनको लागू करने को पूरी तरह तर्कसंगत बनाना हो तो विशेष प्रकार की ट्रेनिंग आवश्यक है। सामान्यतः यही सच है कि केवल वही व्यक्ति ऐसे संगठित समूह के प्रशासनिक स्टाफ का सदस्य होने के योग्य है जिसने पर्याप्त तकनीकी प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) प्राप्त किया हो। अतः केवल ऐसे व्यक्ति ही सरकारी पदों पर नियुक्त होने के योग्य होते हैं।

5) विवेकपूर्ण मामलों में यह सिद्धांत की बात है कि प्रशासनिक स्टाफ के सदस्यों को उत्पादन और प्रशासन के साधनों के स्वामित्व से बिल्कुल अलग रखा जाए। प्रशासनिक स्टाफ से सम्बद्ध अधिकारी, कर्मचारी और मजदूरों के पास उत्पादन और प्रशासन के गैर-मानवीय साधनों का स्वामित्व नहीं होता। अपितु ये साधन वस्तु अथवा धन के रूप में प्रयोग के लिए उपलब्ध करवाए जाते हैं और अधिकारी को

उनके प्रयोग का हिसाब किताब रखना पड़ता है। इसके अतिरिक्त सिद्धांत रूप में संगठन अथवा संस्था की संपत्ति, जिसका नियंत्रण संस्था के ही लोगों के हाथों में होता है तथा उसके निजी प्रयोग के लिए उसकी अपनी संपत्ति दोनों पूरी तरह अलग-अलग होती हैं। इसके अनुसार ही सरकारी कार्यों को करने वाले स्थान अथवा आवासीय मकानों में भी अंतर होता है।

6) विवेकपूर्ण मामलों में पदाधिकारी द्वारा अपने पद का दुरुपयोग बिल्कुल नहीं किया जाता। जहाँ भी किसी पद के साथ अधिकार जुडे हैं, जैसे — न्यायाधीशों के मामले में और गत दिनों से निरंतर बढ़ रहे अधिकारियों और मजदूरों तक के भी मामलों में सामान्यतया अधिकारों का दुरुपयोग नहीं होता अपितु इनका प्रयोग विशुद्ध रूप से पद के स्वतंत्र व्यवहार के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए किया जाता है ताकि वह सामान्य नियमों के अनुरूप हो।

7) लिखित एवं निर्मित प्रशासनिक कानून, निर्णय एवं नियम तथा ऐसे मामले जहाँ मौखिक विचार-विमर्श ही नियम हों — वहां इन सबका पालन करना अनिवार्य है। यह प्रारंभिक विचार-विमर्श और प्रस्तावों के साथ-साथ अंतिम निर्णयों तक के लिए लागू होता है। लिखित दस्तावेजों और सरकारी कामों की निरंतर व्यवस्था से पद बनता है जो सभी प्रकार के आधुनिक कार्यों का केंद्र है (स्रोतः क्रेब, 1997)।

वेबर के अनुसार यद्यपि विवेकशीलता समाज के आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन इत्यादि में दिखाई देती है परंतु सिद्धांत रूप में यह प्रशासन के आधुनिक संस्थानों और विशेषतः नौकरशाही में दिखाई पड़ती है। वह कहता है कि न तो उदारवाद से जुड़ा पूंजीवाद और न ही सामाजिक न्याय के लिए प्रतिबद्ध समाजवाद प्रशासनिक प्रभुत्व के साधनों को अपनाने की अवहेलना कर सकता है। नौकरशाही की अमूर्तता और उसकी गणनात्मक क्षमता को न केवल बाध्यकारी अपितु प्रभुता के ढाँचे में लोगों से प्रभावशाली ढंग से स्वैच्छिक अनुपालन करवाने वाली संस्था के रूप में देखा जाता है। वेबर के पास आधुनिक प्रकार की विशिष्ट वैध प्रभुता द्वारा पहले से प्रभुता प्राप्त वैधता प्रदान करने वाले सिद्धांत की परम्परागत अपील का स्थान लेने का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

19.5 राज्य और दुर्खाइम

दुर्खाइम अपनी पुस्तक 'प्रोफेशन एथिक्स एंड सिविल मॉरल्स (1957) में राज्य की प्रकृति और विशेषताओं का वर्णन करता है। उसके अनुसार, राजनीतिक जीवन में शासित और शासक के बीच विरोध प्रमुख है। राज्य के प्रति उसके विचार अधिकाधिक उसके श्रम विभाजन की व्याख्या तथा समेकता से सम्बद्ध हैं। दुर्खाइम राज्य के विकास को समाज में हुए श्रम विभाजन पर आधारित मानता है जैसे-जैसे समाज जटिल होते गए तो शासित और शासक के बीच भेद होता गया जिसके परिणामस्वरूप राज्य का गठन हुआ। दुर्खाइम के अनुसार राज्य का कार्य विभिन्न हितों के बीच समन्वय स्थापित करना तथा विशेष रूप से व्यक्ति को छोटे समूहों की शक्ति से बचाना होता है। इस प्रकार राज्य व्यक्ति की रक्षा करता है और हित समूहों को संतुलित करता है।

यांत्रिक समेकता अल्प विकसित अथवा आदि समाजों की पहचान है जहां श्रम विभाजन न के बराबर है। जबकि श्रम विभाजन के क्षेत्र में अधिक विकसित समाज जैविक समेकता से परस्पर जुड़े रहते हैं। दुर्खाइम के अनुसार आदिम समाजों में कोई राजनीति अथवा राज्य नहीं था क्योंकि तब श्रम विभाजन नहीं था अथवा न्यूनतम था और इसलिए शासित और शासक जैसे समूह भी नहीं थे।

इसके साथ ही उसका विचार है कि समाज का शासित और शासक में विभाजन केवल राज्य में ही नहीं होता अपितु पितृतत्रात्मक परिवारों में भी होता है। दुर्खाइम ने राज्य और ऐसी संस्थाओं के बीच अंतर स्पष्ट करने का प्रयास किया है। एक निश्चित क्षेत्र का आकार और नियंत्रण ऐसी संस्थाओं को राज्य से विलग करता है। लेकिन दुर्खाइम के मतानुसार राज्य के महत्वपूर्ण लक्षण के रूप में अधिक लोगों पर नियंत्रण होना अनिवार्य नहीं है अपितु विभिन्न गौण सामाजिक समूहों पर नियंत्रण होना आवश्यक है। इन गौण सामाजिक समूहों पर शासन करने वाले अधिकारियों के संगठन को राज्य कहते हैं। यह पूरे समाज का मूर्त रूप नहीं है अपितु एक विशेष संस्थान है।

इसके बाद दुर्खाइम राज्य और व्यक्ति के संबंधों पर चर्चा करता है। दुर्खाइम के अनुसार यांत्रिक समूकता वाले राज्यों में यह कोई मुद्दा नहीं था जहाँ व्यक्ति पूरे समाज में ही समाहित था लेकिन जब जैविक समेकता में वृद्धि होती है तो राज्य की शक्तियों में भी वृद्धि होती है और व्यक्ति के अधिकारों में भी वृद्धि होती है। राज्य की उन्नति और विकास से व्यक्ति के अधिकारों को कोई खतरा नहीं है अपितु व्यक्ति के अधिकार बढ़ते हैं।

अभ्यास 19.3

मार्क्स और दुर्खाइम की राज्य की अवधारणा की तुलना कीजिए।

दुर्खाइम राज्य और समाज के बीच स्पष्ट भेद करता है। प्रत्येक समाज निरंकुश होता है, कम से कम तब तो अवश्य ही होता है जब समाज के अंदर से ही इस निरंकुशता को रोकने के लिए कोई दखल नहीं दिया जाता। जैसे-जैसे समाज अधिक विवश होता जाता है तब व्यक्ति को एक समूह से दूसरे समूह में जाने की और गौण समूहों द्वारा अपने सदस्यों पर निरंकुश नियंत्रण को रोकने की जरूरत होती है और राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह इस जरूरत को पूरा करे। दुर्खाइम का यह तर्क था कि यदि समाज का कोई सदस्य समाज के प्रति अपनी प्रतिबद्धता अनुभव करता है तो राज्य को ऐसी परिस्थितियाँ बनानी चाहिए कि व्यक्ति अपने इस दायित्व का निर्वाह कर सके।

दुर्खाइम के लिए समाज अद्वितीय (sui generis) है। उसकी दृष्टि में समाज प्रत्येक चीज से अधिक महत्वपूर्ण है। समाज का अस्तित्व व्यक्ति से कहीं अधिक है और यह व्यक्तियों पर अपनी अपार शक्ति का प्रयोग करता है। समाज के संबंध में उसके विचार राज्य के प्रति उसके विचारों में झलकते हैं। दुर्खाइम के अनुसार राज्य आवश्यक रूप से गौण समूहों के बीच वैसे ही मध्यस्थ है। गौण समूह समाज में विकसित होते हैं क्योंकि आधुनिक समाजों में विभाजन अधिक भ्रामक और कुतर्कपूर्ण हैं। ये गौण समूह व्यक्ति और समाज के बीच मध्यस्थ होते हैं जैसे राज्य व्यक्ति और गौण समूहों के बीच मध्यस्थता करता है।

19.6 सत्ता की अवधारणा

यद्यपि सत्ता का मानवीय व्यवहार और सामाजिक संबंधों में सार्वभौमिक सिद्धांत है, परंतु इस सिद्धांत में कोई समरूपता नहीं पाई जाती। मानव समाज और संस्कृति में रचा-बसा यह सिद्धांत अति अमूर्त और गहरे अध्ययन का विषय रहा है। समाज विज्ञान में सत्ता पर आधारित विस्तृत साहित्य बिखरा हुआ और विषमांगी है। इस प्रकार के साहित्य में सत्ता को व्यक्ति की विशेषता के रूप में, शक्ति को व्यक्तियों के बीच निर्मित रूप में, सत्ता एक वस्तु के रूप में, सत्ता एक आक्समिक एवं एक दार्शनिक निर्माण के रूप में सैद्धांतिक ढाँचे के अंतर्गत वर्णित किया गया है। प्रत्येक ढाँचा सत्ता के सिद्धांत के अद्वितीय आयामों को प्रस्तुत करता है (काकाबडसे 1984)। इस साहित्य में प्रायः सत्ता के सिद्धांत को प्राप्त परिणामों को एक इच्छा के रूप में प्रस्तुत करने की क्षमता के रूप में व्यक्त किया गया है। सत्ता प्रयोग का सामाजिक महत्व यह है कि यह व्यक्ति के चयन के क्षेत्र को सीमित कर देता है। समाजशास्त्री प्रायः शक्ति के दो रूपों सत्तात्मक और दमनात्मक के बीच भेद

करते हैं। इस इकाई में सत्ता को समाज और राज्य के संदर्भ में स्पष्ट करने पर बल दिया गया है।

19.7 मार्क्स और सत्ता

मार्क्स सत्ता की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं देते। उसके लिए सत्ता का अर्थ है दमन। मार्क्स के विचार में सत्ता, समाज के एक विशेष समूह द्वारा शेष समाज की कीमत पर शक्ति रखना होता है। उसके अनुसार समाज में सत्ता का स्रोत आर्थिक संरचना में तथा उत्पादन के साधनों को नियंत्रित करने वालों में निहित होता है। प्रभुता संपन्न समूह शक्ति का प्रयोग अपने हितों को साधनों में करता है जिसके फलस्वरूप सत्ता के आधीन लोगों का शोषण होता है। मार्क्स तर्क देता है कि यद्यपि समय-समय पर प्रभुता संपन्न वर्ग को अपनी सत्ता और सर्वोच्चता बनाए रखने के लिए बल का सीधा प्रयोग करना पड़ता है परंतु इस प्रकार के बल प्रयोग की अनुपस्थिति का यह अर्थ नहीं लगाना चाहिए कि शोषण नहीं हो रहा। स्पष्ट दमन के अभाव को दमन में कमी अथवा इसकी कम जरूरत के रूप में नहीं समझना चाहिए। इसका कारण यह है कि प्रभुता संपन्न समूह को अपनी स्थिति का ज्ञान नहीं होता तथा जिन सिद्धांतों और विचारधारा के बीच उसका समाजीकरण हुआ है, उसकी प्रभावशीलता का यह परिणाम भी होता है।

प्रभुता संपन्न वर्ग की प्रभुत्व पूर्ण शक्तियों से संबंधित इन प्रभुतापूर्ण विचारों तथा अधीनस्थ वर्गों के शोषण को आमतौर पर मान्यता कैसे प्राप्त होती है। मार्क्स का तर्क है कि समाजीकरण की विभिन्न एजेंसियों के माध्यम से विशिष्ट और विशेष विचार व्याप्त होते हैं। सामान्य रूप से स्वीकृत विचारों, विश्वासों और मूल्यों को बढ़ावा देने में परिवार, शिक्षा व्यवस्था और जन संचार के साधन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मार्क्सवादियों के मतानुसार समाजीकरण की इन संस्थानों के माध्यम से समाज में वर्गों के वास्तविक चरित्र को न्यायोचित ठहराया जाता है और यह असमानता और प्रभुता को सुनिश्चित करते हैं जिससे समाज में शक्ति संरचना को स्वीकृति मिलती है। यह मार्क्सवादी विचारधारा की उपरि-ढाँचे, समाज के गैर-आर्थिक संस्थानों तथा उसके द्वारा प्रसारित विचारों और विश्वासों का महत्वपूर्ण तत्व है। मान्यता यह है कि ये संस्थान, वर्ग आधारित उत्पादन को बढ़ाने के लिए अस्तित्व में हैं। अतः आर्थिक संरचना में असंतुलन ऊपरी ढाँचे में परिलक्षित होता है।

प्रभुता और आधीनता

मार्क्सवादी विचारकों का विचार है कि शिक्षा, राज्य और जन संचार जैसी संस्थाएं वर्ग स्थिति से सम्बद्ध श्रेष्ठता और हीनता की परम्परागत छवि को न्यायोचित ठहराती है। अतः मार्क्सवादी सिद्धांत के अनुसार आंतरिक ढाँचे में प्रभुता और हीनता के सम्बन्धों को उपरि ढाँचा उचित और कानूनी रूप प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, पूंजीवादी समाज में मालिकों और कर्मचारियों के बीच असमानता पूर्ण संबंध कानूनी व्यवस्था में वैध बनाए जाते हैं। कानूनी स्थितियों की एक श्रेणी सम्पत्ति धारकों के अधिकारों की रक्षा करती है और विशेष रूप से कर्मचारियों द्वारा पैदा की गई सम्पत्ति पर अधिकार की रक्षा करती है। मार्क्सवादियों का मत है कि आंतरिक ढाँचे और ऊपरी ढाँचे के बीच संबंधों का इस प्रकार का विश्लेषण वर्ग आधारित समाज में शक्ति के विषय को विस्तार से वर्णित करता है। उदाहरण के लिए, पूंजीवादी समाज की आंतरिक संरचना एक विशेष प्रकार के राज्य, शिक्षा व्यवस्था, पारिवारिक ढाँचे इत्यादि एवं ऊपरी ढाँचे के सभी संस्थाओं को जन्म देती है जो वर्ग संघर्ष की प्रमुखता को परिलक्षित करती हैं तथा समाज में शासक वर्ग की शक्ति एवं विशेषाधिकार को प्रबलता प्रदान करती है।

मार्क्स के अनुसार शक्ति, समाज में एक विशेष वर्ग (प्रभुत्व संपन्न) द्वारा समाज के शेष

भाग (आधीन वर्ग) की कीमत पर प्रभुता बनाए रखना है। यह सत्ता का एक स्थायी सिद्धांत है क्योंकि प्रभुता संपन्न समूह की शक्ति में वृद्धि दूसरे समाज की शक्ति में हानि को प्रदर्शित करती है। प्रभुता संपन्न समूह अपने हितों के लिए शक्ति का प्रयोग करता है और इन हितों का उनके अधीनस्थों के हितों के साथ सीधा संघर्ष होता है।

मार्क्स के अनुसार समाज में शक्ति का स्रोत इसकी आर्थिक संरचना में निहित होता है। प्रभुता अथवा शक्ति का आधार उत्पादन की ताकत पर स्वामित्व होता है। उत्पादन की ताकतों पर स्वामित्व रखने वाला शासक वर्ग सभी समाजों में अपने आधीनों के दमन एवं शोषण के लिए सत्ता का प्रयोग करता है। दूसरों के शोषण के मामले को मार्क्स ने दमन के रूप में परिभाषित किया। इसे सत्ता का अवैध प्रयोग माना जाता है क्योंकि यह आधीन वर्ग को उसके हितों के विरुद्ध की स्थिति को स्वीकार करने के लिए विवश करता है।

लोगों को शक्ति लौटाने का एकमात्र तरीका उत्पादन के साधनों का साम्यवादी स्वामित्व है। क्योंकि इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति का उत्पादन की ताकत से एक समान संबंध होगा। इसलिए समाज के सभी सदस्यों द्वारा सत्ता का उपभोग किया जाएगा। यहाँ पर मार्क्स के मिथ्या चेतना और वर्ग चेतना के सिद्धांत महत्वपूर्ण हैं। जब आधीन वर्ग प्रभुता संपन्न विचारधारा को स्वीकार कर लेता है तो उनकी दृष्टि से वर्ग समाज की वास्तविक प्रकृति ओझल हो जाती है और तब दुनियां की तस्वीर और इसमें उनकी स्थिति झूठी होती है। जब शोषित वर्ग अपनी शोषण भरी स्थिति महसूस करता है और स्वयं को उसी वर्ग से संबंध रखने वाला मानता है तब उनमें वर्ग चेतना जागृत होती है। वे अपने और अपनी स्थिति पर निजी राय की वस्तुनिष्ठ वास्तविकता से तुलना करना प्रारंभ करते हैं। किसी अधीन वर्ग में वर्ग चेतना का अभ्युदय वह चाबी है जिससे कांति का ताला खुलता है जो अवस्थित शक्ति संरचना को उखाड़ फेंकती है और ऐसी व्यवस्था स्थापित करती है जो नए आर्थिक प्रबंधों के अनुकूल होती है।

19.8 वेबर और सत्ता

वेबर मूल रूप से सत्ता का समाज और राज्य के संदर्भ में वर्णन करता है। वेबर, सत्ता को एक कार्यकर्ता द्वारा दूसरों के विरोध के विरुद्ध अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सक्षम होने की संभावना के रूप में परिभाषित करता है जिनके साथ उसके सामाजिक संबंध हैं (वेबर 1994)। यह एक विस्तृत परिभाषा है। उसकी प्रभुता की परिभाषा अधिक सटीक है। यह शक्ति प्रयोग के केवल उन मामलों का जिक्र करता हैं जहां एक कार्यकर्ता दूसरे द्वारा जारी किए गए आदेश का अनुपालन करता है। सत्ता और प्रभुता के बीच भेद करते हुए वेबर ने व्यवस्था की समस्या को हल करने के लिए दो प्रकार के समाधान प्रस्तुत किए। सत्ता उस कार्रवाई को कहते हैं जो लोगों के विरोध और प्रतिरोध के बावजूद सफल हो सकती है जिन पर इसे लागू किया गया हो। यह समाधान विशेष प्रकार से युद्ध और वर्ग संघर्ष में पाया जाता है परंतु इसमें व्यवस्था के दीर्घजीवी समाधान के रूप में अस्थिर होने की कमजोरी निहित है। इसके विपरीत वैध प्रभुता में उन लोगों के स्वैच्छिक अनुपालन का तत्व होता है जिन पर इसे लागू किया गया हो और इस प्रकार यह अर्थपूर्ण कार्रवाई हो जाती है। लागू किए गए कानून और चमत्कार में समाहित विभिन्न सिद्धांतों जैसे परम्परा और राष्ट्रीय विधिक के प्रति निवेदन के रूप में प्रभुता को वैधता प्रदान की जा सकती है।

वेबर के वर्ग, स्थिति और दल के साथ-साथ राज्य और नौकरशाही के विश्लेषण, उसके सत्ता सिद्धांत का केंद्र हैं। प्रत्येक समूह, संघर्ष के स्वतंत्र बिंदु के रूप में शक्ति के इर्द-गिर्द केंद्रित अथवा इससे प्रभावित होता है। प्रत्येक समूह सत्ता के आधार और इसके पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है। आइए, हम इन सब पर विस्तार से चर्चा करें।

वर्ग, हैसियत और पार्टी पर वेबर का वर्णन समाज में स्तरीकरण के तीन पक्ष हैं जिनमें से प्रत्येक सिद्धांत दूसरों से अलग है और यह निश्चित करता है कि अनुभव और प्रयोग के स्तर पर प्रत्येक, प्रत्येक दूसरे को अनायास प्रभावित कर सके। वेबर सत्ता के आर्थिक स्रोतों की अवहेलना नहीं करता और इन्हें अधिक महत्वपूर्ण स्रोत मानता है, विशेषतः पूंजीवाद में। लेकिन मार्क्स के विपरीत उसका दावा था कि शक्ति का अभ्युदय केवल आर्थिक स्रोतों से नहीं होता और वह निश्चित रूप से शक्ति को उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व तक सीमित नहीं रहता। सत्ता, हैसियत अथवा पार्टी (शक्ति प्राप्त करने वाली संस्थाओं) से भी प्राप्त हो सकती है अथवा सत्ता के लिए ही प्रयास किए जा सकते हैं। सत्ता इन भिन्न-भिन्न प्रकारों में एक दूसरे पर प्रभाव और असर होता है ताकि इन क्षेत्रों में से किसी एक क्षेत्र में प्राप्त सत्ता दूसरे क्षेत्र में शक्ति अथवा स्थिति में परिवर्तन की ओर ले जा सकती है।

वेबर के लिए वर्ग एक आर्थिक व्यवस्था की अभिव्यक्ति है अथवा इसका निर्धारण व्यक्ति की बाजार में स्थिति के आधार पर होता है। यहां एक वर्ग का अभिप्राय समाज में एक समान वर्ग स्थिति के लोगों के कुल जमा योग से है। बाजार स्थिति के आधार पर वर्ग स्थिति की पहचान करने पर उतने ही वर्ग भेद हो सकते हैं जितने आर्थिक आधार पर सूक्ष्म वर्गीकरण हो सकते हैं। लेकिन मार्क्स के अनुरूप ही वेबर मानता है कि सम्पत्ति का स्वामी होना अथवा न होना प्रतिस्पर्धात्मक बाजार में वर्ग भेद का महत्वपूर्ण आधार है। वेबर दो प्रकार के वर्गों के बीच भेद करता है — पहला वर्ग तो विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग है और दूसरा व्यापारी वर्ग अथवा अधिग्रहित वर्ग। वह मध्यम वर्ग की पहचान भी करता है जिसे इन दोनों के बीच रखा जा सकता है। उसके लिए सभी वर्ग स्थितियों के लिए सम्पत्ति का होना अथवा न होना सभी वर्ग स्थितियों का आधार है। वह एक सामाजिक वर्ग की पहचान भी करता है जो वर्ग हैसियत की अनेकताओं से निर्मित है तथा जिसमें व्यक्तिगत आधार पर अथवा उन्नति के दौरान लोगों की अदला-बदली भी संभव है। वेबर के अनुसार, शक्ति का संबंध सम्पत्ति वाले वर्ग से है क्योंकि वे समाज में अच्छी हैसियत और विशेषाधिकारों का सुख भोगते हैं। अधिग्रहित वर्ग ऋणात्मक विशेषाधिकारों की स्थिति में हैं और वे विभिन्न प्रकार के मजदूर हैं। वे समाज में कम शक्ति रखते हैं। समाज में विभिन्न वर्गों और स्तरों के बीच गतिशीलता संभव है। लेकिन वेबर के अनुसार यह गतिशीलता एक सीमित स्तर तक ही संभव है। वह कहता है कि हैसियत के विस्तृत क्षेत्र में जाने को विभिन्न वर्गों के बीच शक्ति के विभेदक रोकते हैं।

बॉक्स 19.4: प्रतिष्ठा समूहों की विशेषताएँ

क्योंकि वेबर मानव आदर्शों की प्रकृति को निर्धारित करने के आर्थिक तथ्यों को महत्वपूर्ण नहीं मानता और ऐसी अवधारणाओं के बीच वर्ग हितों से स्वतंत्र रहकर विभेद करता है और इस प्रकार प्रतिष्ठा समूहों और वर्ग समूहों में भेद करता है। प्रतिष्ठा से वेबर का अभिप्राय किसी व्यक्ति की समाज में वह हैसियत है जिसमें लोग उस व्यक्ति को देखते और रखते हैं। यह ऋणात्मक भी हो सकती है और धनात्मक भी। किसी व्यक्ति की हैसियत का संबंध उस मूल्यांकन से है जो दूसरे लोग उस व्यक्ति के संबंध में करते हैं तथा समाज में उसे एक दर्जा अथवा सम्मान प्रदान करते हैं। प्रतिष्ठा समूह ऐसे लोगों का समूह है जो एक जैसी हैसियत के होते हैं। प्रायः वे अपनी अलग पहचान को एक विशेष जीवन शैली अपनाकर अथवा दूसरों पर अपने से पारस्परिक व्यवहार करने पर पाबंदियां लगाकर जताते हैं। यह स्तरीकरण की व्यवस्था है जो कभी-कभी पक्के वर्गों में बंट कर जड़ हो जाती है यद्यपि उनमें स्पष्ट भेद होते हैं। प्रतिष्ठा समूह अस्थायी होते हैं। सामाजिक सम्मान के अतिरिक्त एक विशिष्ट जीवन शैली और पाबंदियाँ किसी विशेष वर्ग समूह की पहचान बन जाती हैं। वेबर के विचार में वर्ग भेद और प्रतिष्ठा भेद को विश्लेषण और तथ्यों के आधार पर निर्धारित किया जा सकता है परंतु वे एक दूसरे से संबंधित हैं तथा वे एक दूसरे के क्षेत्र में प्रतिदर्शात्मक रूप से प्रविष्ट करते हैं।

वेबर प्रतिष्ठा और वर्ग समूह की सदस्यता को सामाजिक शक्ति का आधार मानता है। लेकिन राजनीतिक दल के निर्माण का शक्ति पर अधिक प्रभाव होता है। वेबर के अनुसार पार्टी (दल) का अभिप्राय एक स्वैच्छिक संस्था से है जिसका उद्देश्य किसी संगठन में निदेशात्मक नियंत्रण प्राप्त करना होता है ताकि उस संगठन में वे अपनी कुछ निश्चित नीतियों को लागू कर सकें। दल संस्थाएं होती हैं न कि समुदाय अथवा समूह और वे नियोजित ढंग से लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वेबर यह नोट करता है कि वर्ग आर्थिक व्यवस्था में होते हैं, प्रतिष्ठा समूह सामाजिक व्यवस्था में तथा पार्टियां (दल) शक्ति के क्षेत्र में होती हैं। एक तरफ पार्टियों के बीच में अंतर और दूसरी तरफ प्रतिष्ठा समूहों और वर्गों के बीच अंतर विश्लेषण के तल में हैं। पार्टियां संस्थाएं होती हैं जबकि वर्ग और प्रतिष्ठा समूह लोगों के समूह हैं। यदि प्रतिष्ठा समूह अथवा वर्ग सुसंगठित हो जाएं तो वे पार्टियां बना सकते हैं अथवा उनकी पार्टियाँ वर्ग अथवा प्रतिष्ठा समूह के संगठनात्मक पक्ष बन सकते हैं। व्यापारिक संघ, व्यवसायिक संस्थाएं जातीय संस्थाएं और धार्मिक संस्थान इसके उदाहरण हैं। बड़े स्तर पर पार्टियाँ शक्ति का प्रतिनिधित्व करती हैं। बड़े स्तर पर शक्ति के संबंध में उसकी अवधारणा के अनुसार शक्ति और प्रभुता में गहरा संबंध है। वह तीन प्रकार की प्रभुता — चमत्कारिक, पारंपरिक और कानूनी — विवेकपूर्ण भेद करता है।

चमत्कारिक नेतृत्व में शक्ति का आधार नेता का चमत्कार होता है। चमत्कार शब्द का प्रयोग किसी के व्यक्तित्व के ऐसे गुण के लिए किया जाता है जिसके कारण वह सामान्य लोगों से अलग होता है तथा अलौकिक शक्ति अथवा विशिष्ट रूप से असाधारण शक्तियों और विशेषताओं से संपन्न होता है। पारम्परिक प्रभुता में युगों पुरानी परंपराए शक्ति का आधार होती हैं। पितृतंत्र पारंपरिक प्रभुता का अच्छा उदाहरण है। कानूनी-तार्किक प्रभुता में शक्ति का आधार वैध कानून होते हैं। वेबर के लिए वर्ग, प्रतिष्ठा और पार्टी तीनों ही शक्ति के स्रोत हैं। अतः शक्ति पर उसके विचार आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक मानदण्डों के आर-पार जाते हैं।

19.9 पार्सन्स और सत्ता

पार्सन्स सत्ता को पूरे समाज द्वारा प्राप्त वस्तु मानता है। इस प्रकार समाज में सत्ता एक सामान्य सुविधा अथवा संसाधन है। जन साधारण से किए गए वायदों के अनुसार लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समाज के संसाधनों का उपयोग करने की क्षमता को सत्ता कहते हैं। इस दृष्टि से समाज में सत्ता की मात्रा को सामूहिक लक्ष्यों की प्राप्ति के स्तर से मापते हैं। अतः किसी सामाजिक व्यवस्था के सदस्यों द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की कार्यकुशलता जितनी अधिक होगी उतनी ही अधिक शक्ति समाज में होगी। इस विचार को शक्ति का परिवर्तनीय सिद्धांत कहा जाता है (वेबर और मार्क्स के शक्ति के अचर सिद्धांत से भिन्न) क्योंकि समाज में सत्ता स्थिर दिखाई नहीं देती। अपितु यह परिवर्तनशील है क्योंकि यह घट या बढ़ सकती है (हरलम्बोस 1980, टर्नर 1996)।

सत्ता पर पार्सन्स के विचारों को उसके 'समाज के सामान्य सिद्धांत' से विकसित किया गया है। उसका विश्वास है कि समाज में व्यवस्था, स्थायित्व और सहयोग का आधार मूल्यों के प्रति समाज की चिन्ता है अर्थात यह समाज के लोगों द्वारा एक सामान्य सहमति है कि समाज के लिए क्या अच्छा और उपयोगी है। उसका मानना है कि मूल्यों पर इस प्रकार की सहमति समाज व्यवस्था को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। संयुक्त मूल्यों से संयुक्त लक्ष्य उत्पन्न होते हैं जो पूरे समाज के लक्ष्य होत हैं। उदाहरण के लिए यदि भौतिकवाद पश्चिमी औद्योगिक समाज का प्रमुख मूल्य है तो सामूहिक लक्ष्य जैसे आर्थिक विस्तार और उच्च जीवन स्तर उस प्रमुख मूल्य की उत्पत्ति कहा जा सकता है। अधिक सक्षम पश्चिमी समाजों को भी इन लक्ष्यों को प्राप्त करना है। आर्थिक विकास और धीरे-धीरे ऊंचा उठता जीवन स्तर पूरे समाज में बढ़ती शक्ति का सूचक है।

समाज के भीतर सत्ता विभेदक संबंधी पार्सन्स के विचार भी उसके समाज व्यवस्था के सामान्य सिद्धांत से विकसित किए गए हैं। उसका मत है कि क्योंकि समाज के सभी लोगों के लक्ष्य सांझे हैं, इसलिए उन सांझे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए ही सामान्यतः सत्ता का प्रयोग किया जाएगा। अतः पार्सन्स के अनुसार सामाजिक व्यवस्था में सत्ता का पक्ष सम्पूर्णात्मक है जैसे समाज का स्तरीकरण। पार्सन्स का मत है कि मूल्यों पर सहमति सभी समाजों का एक अनिवार्य तत्व है। उसके आधार पर ही संयुक्त मूल्यों के आधार पर व्यक्तियों को श्रेणीबद्ध करने से एक प्रकार का स्तरीकरण हो जाता है। अतः जो समाज में सफलतापूर्वक निर्वाह करते हैं वे मूल्यों को महत्व देते हैं और उन्हें उच्च सम्मान और शक्ति प्रदान की जाती है। अतः क्रियावादी पार्सन्स का विश्वास है कि समाज के विभिन्न स्तरों के बीच शक्ति और प्रतिष्ठा का यह वितरण न्यायोचित है क्योंकि मूलतः वे संयुक्त मूल्यों की अभिव्यक्ति हैं।

पार्सन्स सामाजिक समूहों के बीच संबंधों को विवाद और संघर्ष के स्थान पर सहयोग और परस्पर निर्भरता का मानता है। जटिल औद्योगिक समाजों में भिन्न-भिन्न समूह किसी गतिविधि में विशेषज्ञता प्राप्त कर लेते हैं। कोई भी समूह आत्मनिर्भर नहीं होता अतः वह समूह अपने सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकता और इस लिए प्रत्येक समूह अन्य समूहों के साथ वस्तुओं और सेवाओं के आदान-प्रदान के साथ आपसी व्यवहार प्रारंभ करता है जिससे भिन्न सामाजिक समूहों के बीच संबंध लेन-देन के होते हैं। यह संबंध स्तरीकरण व्यवस्था में ऊपर के स्तर तक होते हैं। अलग समाजों में, जहां उच्च विशेषज्ञता के आधार पर श्रम विभाजन दिखाई देता है,वहाँ कुछ सदस्य संगठन और योजना के क्षेत्र में विशेषज्ञता प्राप्त कर लेते हैं (शासक वर्ग) और अन्य उनका अनुकरण करते है। (शासित वर्ग)। पार्सन्स कहता है कि इसके आधार पर शक्ति और प्रतिष्ठा की दृष्टि से असमानता पैदा होती है।

बॉक्स 19.5: सत्ता और प्रतिष्ठा

पार्सन्स का मत है कि शक्ति में असमानता संयुक्त मूल्यों पर आधारित है। सत्ता वैध शक्ति है और इसमें समाज के सभी सदस्य संयुक्त रूप से इसे ठीक और न्यायोचित मानते हैं। इसे इसी रूप में स्वीकार किया जाता है क्योंकि सत्ता के पद अपनी शक्ति का प्रयोग उन सामूहिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए करते हैं जो समाज के केंद्रीय मूल्यों से निरूपित किए जाते हैं। पार्सन्स का विचार है कि समाज के स्तरीकरण से जुड़े शक्ति और प्रतिष्ठा के विभेदक समाज के लिए अपरिहार्य और व्यावहारिक हैं। यह अपरिहार्य है क्योंकि यह संयुक्त मूल्यों से निरूपित है जो सभी सामाजिक व्यवस्थाओं का आवश्यक भाग है। यह व्यवहारिक है क्योंकि यह कई सामाजिक समूहों को एकीकृत करने का काम करते हैं।

पार्सन्स ने सत्ता के संबध में अपने बाद के लेखन में अपने विचारों में काफी सुधार किया है (गिड्डन 1995)। अपने बाद के लेखन में सी.डब्ल्यू मिल्स के शक्ति सिद्धांत की आलोचना करते हुए पार्सन्स "सत्ता" को सामाजिक व्यवस्था की उपजं मानते हैं, ठीक वैसे ही जैसे उत्पादक अर्थव्यवस्था में धन-सम्पदा को पैदा किया जाता है। पार्सन्स ने शक्ति और धन के बीच जो समानता विकसित की वह इस विचार पर आधारित थी कि उनमें से प्रत्येक की पार्सन्स द्वारा विकसित सामाजिक व्यवस्था की उपव्यवस्थाओं की चार गतिविधियों में से दो में समान भूमिका थी।

पार्सन्स शक्ति को सत्ता से निकला हुआ मानता है और उसके लिए सत्ता संस्थागत वैधता थी जिसके अंतर्गत शक्ति निहित है और इसको नेताओं द्वारा समाज समूह से सहयोग की अपेक्षा अधिकार के रूप में परिभाषित किया गया (पार्सन्स1960)। बाध्यकारी दायित्वों के विषय में बोलकर पार्सन्स ने जानबूझ कर शक्ति की परिभाषा में वैधता को सम्मिलित किया क्योंकि उसके लिए अवैध शक्ति जैसी कोई चीज नहीं थी (गिड्डनस 1995)।

अभ्यास 19.5

राज्य और सत्ता के विषय में पार्सन्स के विचारों को रेखांकित कीजिए।

पार्सन्स ने इस बात पर बल दिया कि शक्ति प्रयोग बहुत से साधनों में से एक साधन है जिससे एक पक्ष दूसरे पक्ष से अपेक्षित कार्यविधि की अनुपालना प्राप्त कर सके। पार्सन्स कहता है कि पुरस्कार अथवा दमन जैसे तरीके अपनाकर अनुपालना प्राप्त की जा सकती है। लेकिन अधिकांश मामलों में जब शक्ति प्रयोग की जा रही थी तो उसमें कहीं कोई प्रत्यक्ष आज्ञा का प्रयोग नहीं किया गया था। पार्सन्स का यह मत था कि शक्ति के अधिकार और प्रयोग का बल प्रयोग के साथ दिखाई न दिए जाने पर बल देना विशेष रूप से जरूरी है।

19.10 राज्य एवं सत्ता के अन्य प्रारूप

राज्य और सत्ता के दोनों सिद्धांत आवश्यक रूप से विवादित सिद्धांत हैं। राज्य और सत्ता के अनेक सामाजिक सिद्धांत और प्रारूप हैं जो इनके उद्गम, विकास और प्रभाव के भिन्न-भिन्न विवरण प्रस्तुत करते हैं। उदारवादी सिद्धांत, अनेकतावादी सिद्धांत, इलीट सिद्धांत नव मार्क्सवादी और अराजकतवादी सिद्धांत कुछ ऐसे सिद्धांत हैं जिनका नीचे संक्षेप में वर्णन किया गया है।

राज्य का उदारवादी सिद्धांत हाब्स और लॉक्स जैसे विचारकों के सामाजिक अनुबंधन सिद्धांतों के समय का है। इन विचारकों का मत था कि राज्य का अभ्युदय व्यक्तियों द्वारा स्वैच्छिक समझौते अथवा सामाजिक अनुबंधन से हुआ है जिसमें लोगों की मान्यता है कि एक संप्रभु शक्ति की स्थापना ही उन्हें असुरक्षा, अव्यवस्था अथवा प्रकृति की क्रूरता से बचा सकती है। यहां राज्य समाज में प्रतिस्पर्धी समूहों और व्यक्तियों के बीच एक तटस्थ मध्यस्थ है जो प्रत्येक व्यक्ति को अपने साथियों के अतिक्रमण से बचाने में सक्षम है। इस लिए राज्य एक तटस्थ इकाई है जो सामान्य भलाई अथवा जन हित के प्रतिनिधि के रूप में सब के हित में काम कर रही है।

आधुनिक लेखकों ने उदारवादी सिद्धांत को राज्य के अनेकतावादी सिद्धांत के रूप में विस्तार दिया है। अनेकतावादी सिद्धांत का तर्क है कि सत्ता शासक वर्ग के किसी संभ्रात समूह के बजाय अनेक प्रकार के सामाजिक समूहों में फैली होती है। यह विकेंद्रीकृत, बहुत लोगों में विभक्त, विसरित और खंडित होती है, जो कई स्रोतों से निकलती है। आरनल्ड रोज, पीटर बेटले, रोबर्ट डहल, टेलकॉट पार्सन्स तथा नील स्मेलसर कुछ मुख्य अनेकतावादी विचारक हैं। इस सिद्धांत के प्रवक्ता रोबर्ट डहल ने कई लोगों के शासन को बहुशासित राज्य कहा। अनेकतावादियों के परिप्रेक्ष्य में दो या अधिक राजनीतिक दलों के बीच प्रतिस्पर्धा प्रतिनिध्यात्मक सरकार का आवश्यक लक्षण है । अनेकतावादियों के अनुसार विभिन्न हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले हित समूह और दबाव समूह राज्य की निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। अनेकतावादियों का मानना है कि संगठित समूहों और हितों में एक मोटी सी समानता यह होती है कि प्रत्येक की सरकार तक कुछ न कुछ पहुंच होती है और सरकार सबको बिना पक्षपात के सुनने को तैयार होती है। उनका दावा है कि राजनीतिक दलों में पद के लिए प्रतिस्पर्धा होने से मतदाताओं को अपने नेता चुनने और सरकारी नीतियों को प्रभावित करने का अवसर प्राप्त होता है। अनेकतावादी सिद्धांत उदारवादी, लोकतांत्रिक राज्य के अभ्युदय को स्पष्ट करता है। अनेकतावादियों के लिए राज्य संस्थागत शक्ति एवं सत्ता का प्रतिनिधित्व करता है और यह आधुनिक समाज में प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र का सर्वोच्च रक्षक है। राज्य का प्राथिमक कार्य बहुत से प्रतियोगी समूहों के हितों के बीच संतुलन स्थापित करना, पूरे समाज के हितों का प्रतिनिधित्व करना तथा अन्य प्रमुख संस्थाओं से सहयोग करना है। वे राज्य को प्रतियोगी एवं संघर्षरत संस्थाओं का समुच्चय मानते हैं न कि एक अखंडित इकाई, जो

शेष समाज पर अपनी शक्ति का प्रयोग करती है (स्मिथ 1995)। उनका मत है कि शक्ति केवल प्रत्यक्ष संघर्ष में अवस्थित होती है और लोगों के हित साधारणतया इन प्रत्यक्ष प्राथमिकताओं में स्पष्ट होते हैं। राज्य का एक वैकल्पिक नव-अनेकतावादी सिद्धांत जे.के.गालब्रेथ और चार्ल्स लिन्डब्लोम जैसे लेखकों ने विकसित किया। उनका मत है कि आधुनिक औद्योगिक राज्य अधिक जटिल हैं और जन दबाव के समक्ष शास्त्रीय अनेकतवादी प्रारूप की तुलना में कम उत्तरदायी हैं। उनके अनुसार लोकतंत्र का अर्थ प्रत्यक्ष लोकप्रिय शासन से बदलकर राज्य का नियंत्रण पाने के लिए संभ्रांत वर्ग के बीच प्रतियोगिता हो गया है। उनका तर्क है कि संभ्रात जन कोई एक संगठित समूह नहीं है अपितु ये राजनीतिक शक्ति के अनेक केंद्र हैं। नव-अनेकतावादी संभ्रात लोगों और विशेषतः निगम संबंधित संभ्रात लोगों को सरकार और राज्य की नीतियों पर अधिक प्रभावकारी मानते हैं और ये अन्य हित समूहों के प्रभाव को बाधित कर सकते हैं।

राज्य का संभ्रातवादी सिद्धांत कहता है कि सभी समाज दो मुख्य समूहों — शासक और शासित में बंटे होते हैं। शास्त्रीय संभ्रातवादी विचारकों जैसे कि विल्फ्रेडो पारेटो, गैटनो मोस्का और रोबर्ट माईकल का तर्क था कि राजनीतिक शक्ति सदैव छोटे विशिष्ट समूह के हाथों में होती है और समाजवाद (मार्क्सवादी सिद्धांत) तथा लोकतंत्र (अनेकतवादी सिद्धांत) एक कोरी कल्पना हैं। संभ्रातवादी विचारकों को यह प्रश्न परेशान करता है कि ऐसा क्यों और कैसे होता है कि अल्पमत सदैव बहुमत पर शासन करता है। यह एक ऐसा तथ्य है जो किसी भी समाज में अपरिहार्य है। उनके अनुसार सामाजिक शक्ति विशिष्ट समूहों में केंद्रित होती है जो प्रमुख सामाजिक संस्थाओं के संसाधनों को नियंत्रित करते हैं और कोई समाज चाहे कितना भी लोकतांत्रिक हो, संभ्रात जन ही अधिकांश शक्ति रखते हैं, सभी अथवा अनेक शक्ति साधनों का प्रयोग करते हैं और शक्ति स्वयं में साध्य हो जाती है।

पारेटो संभ्रात जन के शासन के आधार के रूप में मनोवैज्ञानिक लक्षणों पर विशेष जोर देता है। उसका विचार है कि दो प्रमुख प्रकार के विशिष्ट जन होते हैं जिन्हें उसने शेर और लोमड़ी कहा। शेर सीधी और निर्णायक कार्रवाई करने की क्षमता के कारण शक्ति प्राप्त करते हैं और वे बलपूर्वक शासन करने का प्रयत्न करते हैं। सैनिक तानाशाही इस प्रकार के शासक विशिष्टजन का उदाहरण है जबकि (फोक्सिज़) लोमड़ियाँ चालाकी, कपट तथा कूटनीतिक चालबाजी और मक्कारी से शासन करती हैं।

समाज में तब प्रमुख परिवर्तन होता है जब एक संभ्रात समूह दूसरे को हटाता है और पारेटो इस क्रिया को संभ्रात जनों का परिचक्र कहता है और उसका विश्वास है कि इतिहास संभ्रात जनों के परिचक्रण का कभी न समाप्त होने वाला चक्र है। उसके लिए राज्य, शासक विशिष्टजन के हाथ में एक हथियार है। वह आधुनिक लोकतंत्रों को विशिष्टजनों की प्रभुता का एक अन्य रूप मानता है।

बॉक्स 19.6: अल्पमत का शासन

गैटनों मोस्का का विश्वास था कि अल्पमत द्वारा शासन सामाजिक जीवन का एक अपरिहार्य लक्षण है। वह दावा करता है कि प्रत्येक समाज में लोगों के दो वर्ग दिखाई देते हैं — एक वर्ग जो शासन करता है और दूसरा जिस पर शासन किया जाता है। पहला वर्ग, जो सदैव गिनती में कम होता है, सभी राजनीतिक कार्यों को करता है और शक्ति तथा शक्ति के साथ आने वाले लाभों पर एकाधिकार जमाता है जबकि दूसरा वर्ग, जो संख्या में अधिक होता है, पहले द्वारा निदेशित एवं शासित होता है। उसका मत है कि लोकतंत्रों एवं शासन के अन्य रूपों के बीच कई महत्वपूर्ण अंतर हैं। समान व्यवस्थाओं के बीच जैसे जाति और सामन्तवादी समाजों के बीच तुलना करने पर लोकतांत्रिक समाजों में शासक संभ्रात जन स्वतंत्र हैं। सामाजिक पृष्ठभूमि के विस्तृत क्षेत्र से किसी एक संभ्रात वर्ग के आने की संभावना अधिक होती है। परिणामस्वरूप

विभिन्न समाज समूहों के हितों को संभ्रात जनों द्वारा लिए गए निर्णयों में दर्शाया जा सकता है । इसलिए बहुमत का सरकार पर कुछ नियंत्रण हो सकता है।

सी.राईट मिल्स संभ्रात शासन को संस्थाओं की शब्दावली में वर्णित करता है। वह अपने शक्ति के प्रारूप में वर्णन करता है कि संस्थाओं की संरचना इस प्रकार की होती है कि संस्थाओं के शिखर पदों पर बैठे लोग शक्ति पर एकाधिकार जमा लेते हैं। उसके अनुसार अमरीका की राजनीति में बड़े औद्योगिक और सैनिकों का प्रभुत्व था जिसे आमतौर पर सैनिक औद्योगिक गठजोड़ कहा जाता था और जो सरकारी नीतियों को तय करते थे। उसका दावा था कि अमरीका की एक लोकतांत्रिक बहुलतावादी समाज की तस्वीर झूठी थी जिसमें निर्णय लेने की प्रक्रिया विकेंद्रीकृत और शक्ति का विभेदीकरण था। वास्तव में, संविधान के पर्दे के नीचे एक एकीकृत शक्तिशाली संभ्रात वर्ग था जो सभी महत्वपूर्ण निर्णयों में अपनी इच्छा चलाता था। इस संभ्रात वर्ग में अमरीकी समाज के तीन परस्पर जुड़े वर्गों व्यापार, राजनीति और सेना से जुड़े लोग होते थे। मिशैल ने जटिल संस्थाओं के कारण शक्ति का एक संभ्रात वर्ग के हाथों में केंद्रीकृत होना आवश्यक माना। उसका कुलीनतंत्र का दृढ़ नियम स्पष्ट करता है कि आधुनिक समाजों में पार्टियों का अत्यधिक संगठित होना जरूरी है और इस प्रकार वे अपरिहार्य रूप से कुलीनतंत्रवादी हो जाती हैं जिन्हें पार्टी के नेताओं द्वारा चलाया जाता है और अधिकांश सदस्यों को निर्णय लेने की प्रक्रिया से बाहर कर दिया जाता है (मिशेल 1962)।

पुराने मार्क्सवादी राज्य दमनकारी भूमिका पर बल देते हैं। लेकिन नव-मार्क्सवादी बुर्जआ राज्य की वैधता का, सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार औ[illegible]गकारी राज्य के विकास की उपलब्धियों के आधार पर वर्णन करते हैं। एंटोनियो ग्रेमसी और लुइस एल्थुसर ने नव मार्क्सवाद को काफी हद तक प्रभावित किया। एंटोनियो ग्रेमसी के अनुसार आधुनिक परिस्थितियों में राजनीतिक दल ही राज्य का निर्माण करते हैं। वह राज्य के मध्यस्थवादी सिद्धांत का प्रवक्ता था। उसने इस बात पर बल दिया कि शासक वर्ग द्वारा प्रभुता प्राप्त करना केवल दमन पर ही नहीं अपितु सहमति बनाने पर भी निर्भर करता है। उसका मानना था कि सैद्धांतिक और राजनीतिक ढांचे उपरि ढांचे की तुलना में अधिक स्वायत्त होते हैं। उसकी मान्यता थी कि बुर्जुआ वर्ग ने सर्वहारा वर्ग पर अपना आधिपत्य, सैद्धांतिक नेतृत्व और प्रभुता स्थापित कर ली थी और इस काम में राज्य की मुख्य भूमिका थी। ग्रेमसी (Gramsci) द्वारा प्रयुक्त शब्द "आधिपत्य" से उसका अभिप्राय ऐसे ढंग से था जिसके माध्यम से प्रभुता प्राप्त वर्ग अपने शासन के लिए समझौतों और अन्य वर्गों के कुछ बिखरे लोगों से गठजोड़ कर स्वीकृति और सहमति प्राप्त करता है तथा उस तरीके से भी जिससे यह स्थापित किया जाता है कि शासन एक स्थायी सामाजिक रचना है। उसके अनुसार नागरिक समाज में आधिपत्य सबसे पहले वहाँ प्राप्त होता है जहां विचारधारा जीवन के साम्प्रदायिक रूपों में इस प्रकार गुत्थी हुई होती है कि इसे लोगों का सामान्य ज्ञान माना जाता है। उसके अनुसार नागरिक समाज के सभी संबंधों में न केवल वर्ग संबंध अपितु शक्ति और संघर्ष के मुद्दे भी सम्मिलित होते हैं। फ्रांसीसी मार्क्सवादी विचारक लुईस अल्थुसर राज्य के मार्क्सवादी सिद्धांत की कार्यात्मक विवेचना करता है। वह तुलनात्मक दृष्टि से राज्य को आर्थिक आधार से मुक्त मानता है परंतु उसके लिए राज्य उत्पादन के नए ढंग पैदा करने हेतु कार्य करता है। वह आगे कहता है कि उत्पादन के पूंजीवादी ढंग के लिए आवश्यक है कि राज्य अपने अस्तित्व के लिए परिस्थितियां पैदा करे तथा आर्थिक और राजनीतिक स्तरों के बीच परस्पर विरोधी निर्धारण होता है (अल्थुसर 1971)।

अभ्यास 19.6

परीक्षण कीजिए कि अनेकतावादी और संभ्रातवादियों की राज्य और शक्ति के विषय पर सोच में अंतर है।

यद्यपि नव मार्क्सवादी अवधारणा में राज्य को एक मध्यस्थ के रूप में देखने से उदारवाद की झलक मिलती है परंतु फिर भी, यह आधुनिक राज्य के वर्ग चरित्र पर इस संकेत के साथ बल देती है कि राज्य पूंजीवाद के दूरगामी लाभ के लिए कार्य करता है और इसलिए असमान वर्ग शक्ति की स्थापना करता है।

अराजकतावादी राज्य शक्ति की निन्दा करते हैं और उनका विश्वास है कि राज्य तथा राजनीतिक सत्ता के सभी रूप बुरे और अनावश्यक हैं। वे राज्य को दमन का बड़ा केंद्र मानते हैं जो केवल सत्तासीन लोगों की अपने लाभ के लिए दूसरों को आधीन बनाने की इच्छा के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

19.11 सारांश

इस इकाई ने कार्ल मार्क्स, मैक्स वेबर एवं अन्य विचारकों द्वारा राज्य और सत्ता की सैद्धांतिक प्रक्रिया से परिचित करवाया है। मार्क्स ने राज्य और सत्ता की अवधारणा को द्वंद्वात्मक भौतिकवाद और वर्ग संघर्ष के आधार पर समझाया। राज्य और सत्ता को समझाने के लिए आर्थिक गतिविधियां जैसे उत्पादन के प्रकार, उत्पादन एवं वितरण के साधन मार्क्स के विचार के मुख्य आधार थे। मार्क्स ने आर्थिक शक्ति की भूमिका पर बल दिया और कहा कि जिनके पास आर्थिक शक्ति का नियंत्रण है वे ही समाज के उपरि ढांचे पर अधिकार रखते हैं। वेबर ने राज्य को मानव समुदाय के रूप में परिभाषित किया जो एक निश्चित क्षेत्र में शारीरिक बल प्रयोग की वैधता का दावा करता है। उसने वर्णन किया है कि राज्य ने किस प्रकार शक्ति को प्रयोग करने की वैधता प्राप्त की। उसने राज्य के मामलों में निर्णय लेने के लिए नौकरशाही को प्राथमिकता दी और राज्य के भीतर सत्ता के वैध प्रयोग हेतु विवेकशीलता पर जोर दिया। वेबर ने शक्ति और वैधता के बीच निकट का संबंध बताया। उसके लिए वर्ग, प्रतिष्ठा और पार्टी समाज में स्तरीकरण के तीन आयाम हैं। वेबर ने मार्क्स की भांति आर्थिक सिद्धांत पर अधिक बल नहीं दिया। उसने प्रभुता के तीन प्रकारों — चमत्कारिक, परम्परागत और विधि विवेकसंगत — में भेद किया।

इस इकाई में, राज्य और सत्ता के सिद्धांतों को क्रियावादियों तथा अन्य सैद्धांतिक प्रारूपों जैसे उदारवाद, अनेकतावाद, नव मार्क्सवाद एवं संभ्रातवाद में किस प्रकार वर्णित किया गया है, पर भी दृष्टिपात किया गया है।

19.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

हेमिल्टन पीटर 1983. *टालकॉट पार्सन्स*। टविस्टॉक पब्लिकेशंसः लंदन।

इयान, क्रेब 1997. *क्लासिकल सोशल थ्योरी, एन इंट्रोडक्शन टु मार्क्स, वेबर ऐंड सिमिल*। **ऑक्सफोर्ड** यूनिवर्सिटी प्रेसः ग्रेट ब्रिटेन।

रेनहर्ड, बेंडिक्स 1977. *मैक्स वेबरः एन इंटेलेक्टुअल पोरट्रेट*। यूनिवर्सिटी आफ कैलिफोर्निया **प्रेसःयूके।**

वेबर, मैक्स 1994. *वेबरःपॉलिटिकल राइटिंग्स*। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसः यूके।

19.13 संदर्भ ग्रंथावली

दास, हरिहर एंड चौधरी 1999. *पॉलिटिकल थ्योरीः ट्रेडिशनल एंड माडर्न थ्योरी*। नेशनल **पब्लिसिंग हाउसः नई दिल्ली।**

गिडंस, ए. 1995. पॉलिटिक्स, सोसियोलॉजी एंड सोसल थ्योरीः एनकाउंटर विद **क्लासिकल एंड कंटेम्पोरेरी सोसल** थाउट्स। पॉलिटी प्रेसः ऑक्सफोर्ड, यूके।

गोवर्ड, हेनरी एट एल (एडी.) 2000. पॉवर इन कंटेम्पोरेरी पॉलिटिक्सः थ्योरीज, **प्रैक्टिसेस** एंड ग्लोबेलाइजेशन। सेज पब्लिकेशंसः लंदन।

हेमिल्टन पीटर 1983. टलकॉट पार्सस, टविस्टॉक पब्लिकेशंसः लंदन।

हरलम्बोस, एम. 1980. सोसियोलॉजीः थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स। यूनिवर्सिटी टयूटोरियल प्रेस लि. कैम्ब्रिज।

हेवुड, एंड्रयू 1994. पॉलिटिकल थ्योरीः एन इनट्रोडक्शन, पालग्रेव, न्यूयार्क।

इयान, क्रेब 1997. क्लासिकल सोशल थ्योरी, एन इंट्रोडक्शन टु मार्क्स, वेबर ऐंड सिमिल। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः ग्रेट ब्रिटेन।

जॉन पी डिगिंस 1999. मैक्स वेबरः पॉलिटिक्स एंड स्प्रिट ऑफ ट्रेजडी। बेसिक बुक्सः यूके।

जौन्स, फिलिप. लिप 1991. थ्योरी एंड मैथड इन सोसियोलॉजी। बिलिंग एंड संस लि. लंदन।

ककाबादसे. ए एंड सी. पार्कर (एडी.) पॉवर, पॉलिटिक्स एंड आर्गेनाइजेशनंसः ए बिहैवोरियल साइंस व्यू। न्यूयार्कःजॉन विली एंड संस।

केट, नाश 2000. कंटेम्पोरेरी पॉलिटिकल सोसियोलॉजीः ग्लोबेलाइजेशन, पॉलिटिक्स एंड पॉवर। ब्लेकविल पब्लिशर्स, यूके।

लसमेन पीटर 2000. द रूल ऑफ मेन ओवर मेनः पॉलिटिक्स, पॉवर एंड लेजिटिमेशन। इन

मार्क्स, के. 1990. कैपिटलः वाल्यूम 1 (बी.फोक्स [illegible])। न्यूयार्कःपेंगुइन।

मार्क्स के एंड फ्रेडरिक एंगल्स, 1968, द जर्मन आइडियोलॉजी, मास्कोःप्रोगेस पब्लिशर्स।

मिलर, रिचर्ड, एनालाइजिंग मार्क्स, प्रिंसटन एनजेः प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984.

पार्सस टी. 1960. ऑन द कंसेप्ट ऑफ पॉलिटिकल पॉवर। इन टर्नर, ब्रायन.एस. 1999. द टालकट पार्सस रीडर। ब्लेकविलः यूके।

पार्सस टी. 1960. द डिस्ट्रीब्यूसन ऑफ पॉवर इन अमेरिकल सोसायटी। इन टर्नर, ब्रायन.एस. 1999. द टालकट पार्सस रीडर। ब्लेकविलः यूके।

रेनहर्ड, बेंडिक्स 1977. मैक्स वेबरः एन इंटेलेक्टुअल पोरट्रेट। यूनिवर्सिटी आफ कैलिफोर्निया प्रेसःयूके।

रॉबर्ट एलन जौंस 1986. एमाइल दुर्खाइमः एन इंट्रोडक्शन टु फोर मेजर वर्क्स। सेज पब्लिकेशंसः लंदन।

रॉबर्टसन, रोलेंड एंड ब्रायन. एस. टर्नर (एडी.) 1991. टालकट पार्ससः थ्योरिस्ट ऑफ मार्डर्निटी। सेज पब्लिकेशंसः लंदन।

सिंगर, पीटर, मार्क्सः ए वेरी शॉर्ट इंट्रोक्शन, ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2000.

टर्नर ब्रायन (एडी.) 1996. सोसल थ्योरी। ब्लेकवेल पब्लिशर्स, यूके।

टर्नर ब्रायन (एडी.) 1999. द टॉलकट पार्सस रीडर। ब्लेकवेल पब्लिशर्स, यूके।

टर्नर, स्टीफन (एडी.) द कैम्ब्रिज कम्पेनियन टु वेबर। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसः कैम्ब्रिज।

वेबर, मैक्स 1994. वेबरः पॉलिटिकल राइटिंग्स। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसः कैम्ब्रिज।

वेथरली, पॉल। 1998. ए कैपिटलिस्ट स्टेट? मार्क्स एम्बिगस लीगेसी। इन कॉर्लिंग मार्क (एडी.) द कम्युनिस्ट मैनिफेस्टोः न्यू इंटरप्रीटेशंस। एडिनबर्ग यूनिवर्सिटी प्रेसः एडेनबर्ग।

वोल्फ, जॉनथन 2002. व्हाई रीड मार्क्स टुडे? ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः ऑक्सफोर्ड।